• कविताएं...

तलाश...

गुलाब बनने को तैयार हैं सब
बरगद कौन बनना चाहता है
गुंबद बनने को तैयार हैं सब
नींव की ईंट कौन बनना चाहता है
वाह-वाही पाना चाहते हैं सब
त्याग कौन करना चाहता है
पता है सबको जो बन जायेगा बरगद
वह हिल न सकेगा अपनी जगह से
पता है सबको जो बनेगा नींव की ईंट
सब बढ़ जाएंगे उस पर चढ़ के
पता है सब को जो करेगा त्याग
स्वार्थ पूरे करेगे सब उससे
पर बूढ़ा बरगद फिर भी
सबको शीतल छांव प्रदान करता है
खुदी हुई नींव की ईंट भी
भटकों को सही रास्ता दिखाती है
त्यागियों का त्याग ही ज्ञान रूपी प्रकाश से
जीवन रूपी नर्क को स्वर्ग बना देता है
इसीलिए आज भी है तलाश सबको
बूढ़े बरगद की छांव की
पक्की नींव की ईंट की
त्याग में ज्ञान के प्रकाश की

-गौड़

ठहरा हुआ एहसास

एक एक बीता हुआ क्षण
हां
पलों मे फासला तय करके वर्षों का
सिमट आता है सिहरनो में
बंध जाना जंजीरों से मृदुल धागों में
सिर्फ इक जगमगाहट,
कितनी ज़्यादा तेज सौ मर्करी की रोशनियों से
कि
हर वाक्य को पढ़ना ही नहीं सुनना भी आसान
कितनी बरसातें आकर गई
अभी तक मिटा नहीं नंगे पावों का एक भी निशान
क्या इतने दिनों में किसी ने छुआ नहीं
बैठा भी नहीं कोई?
अभी भी दूब
वही दबी है जहां टिकाई थी,
हथेलियां, हमने।

- इला कुमार

• कहानी-रबीन्द्रनाथ टैगोर

अपरिचिता...

गतांक से आगे...

किन कहानी ऐसे खत्म नहीं हुई। जहां पहुंचकर वह अनंत हो गई है वहां का थोड़ा-सा विवरण बताकर अपना यह लेख समाप्त करूंगा।

मां को लेकर तीर्थ करने जा रहा था। भार मेरे ही ऊपर था, क्योंकि मामा इस बार भी हावड़ा पुल के पार नहीं हुए। रेलगाड़ी में सो रहा था। झोंके खाते-खाते दिमाग में नाना प्रकार के बिखरे स्वप्नों का झुनझुना बज रहा था। अकस्मात किसी एक स्टेशन पर जाग पड़ा, वह भी प्रकाश-अंधकार-मिश्रित एक स्वप्न था। केवल आकाश के तारागण चिरपरिचित थे- और सब अपरिचित अस्पष्ट था; स्टेशन की कई सीधी खड़ी बत्तियां प्रकाश द्वारा यह धरती कितनी अपरिचित है एवं जो चारों ओर है वह कितना अधिक दूर है, यही दिखा रही थीं। गाड़ी में मां सो रही थीं; बत्ती के नीचे हरा पर्दा टंगा था, ट्रंक, बक्स, सामान सब एक-दूसरे के ऊपर तितर-बितर पड़े थे। वह मानो स्वप्नलोक का उलटा-पुलटा सामान हो, जो संध्या की हरी बत्ती के टिमटिमाते प्रकाश में होने और न होने के बीच न जाने किस ढंग से पड़ा था।

इस बीच उस विचित्र जगत की अद्भुत रात में कोई बोल उठा, जल्दी आ जाओ, इस डिब्बे में जगह है।

लगा, जैसे गीत सुना हो। बंगाली लड़की के मुख से बंगला बोली कितनी मधुर लगती है इसका पूरा-पूरा अनुमान ऐसे अनुपयुक्त स्थान पर अचानक सुनकर ही किया जा सकता है। किंतु, इस स्वर को निरी एक लड़की का स्वर कहकर श्रेणी-भुक्त कर देने से काम नहीं चलेगा। यह किसी अन्य व्यक्ति का स्वर था, सुनते ही मन कह उठता है, ऐसा तो पहले कभी नहीं सुना।

गले का स्वर मेरे लिए सदा ही बड़ा सत्य रहा है। रूप भी कम बड़ी वस्तु नहीं है, किंतु मनुष्य में जो अंतरतम और अनिर्वचनीय है, मुझे लगता है, जैसे कंठ-स्वर उसी की आकृति हो। चटपट जंगला खोलकर मैंने मुंह बाहर निकाला, कुछ भी न दिखा। प्लेटफार्म पर अंधेरे में खड़े गार्ड ने अपनी एक आंख वाली लालटेन हिलाई, गाड़ी चल दी; मैं जंगले के पास बैठा रहा। मेरी आंखों के सामने कोई मूर्ति न थी, किंतु हृदय में मैं एक हृदय का रूप देखने लगा। वह जैसे इस तारामयी रात्रि के समान हो, जो आवृत कर लेती है, किंतु उसे पकड़ा नहीं जा सकता। जो स्वर! अपरिचित कंठ के स्वर! क्षण-भर में ही तुम मेरे चिरपरिचित के आसन पर आकर बैठ गए हो। तुम कैसे अद्भुत हो- चंचल काल के क्षुब्ध हृदय के ऊपर के फूल के समान खिले हों, किंतु उसकी लहरों के आंदोलन से कोई पंखुड़ी तक नहीं हिलती, अपरिमेय कोमलता में जरा भी दाग नहीं पड़ता।

गाड़ी लोहे के मृदंग पर ताल देती हुई चली। मैं मन-ही-मन गाना सुनता जा रहा था। उसकी एक ही टेक थी- डिब्बे में जगह है। है क्या, जगह है क्या जगह मिले कैसे, कोई किसी को नहीं पहचानता। साथ ही यह न पहचानना- मात्र कोहरा है, माया है, उसके छिन्न होते ही फिर परिचय का अंत नहीं होता। ओ सुधामय स्वर! जिस हृदय के तुम अद्भुत रूप हो, वह क्या मेरा चिर-परिचित नहीं है? जगह है, है, जल्दी बुलाया था, जल्दी ही आया हूं, क्षण-भर भी देर नहीं की है।

दूसरे दिन सुबह एक बड़े स्टेशन पर गाड़ी बदलनी थी हमारे टिकिट फर्स्ट क्लास के थे— आशा थी, भीड़ नहीं होगी।

उतरकर देखा, प्लेटफार्म पर साहबों के अर्दलियों का दल सामान लिए गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहा है। फौज के कोई एक बड़े जनरल साहब भ्रमण के लिए निकले थे। दो—तीन मिनिट के बाद ही गाड़ी आ गई। समझा, फर्स्ट क्लास की आशा छोड़नी पड़ेगी...

रात में ठीक से नींद नहीं आई। प्रायः हर स्टेशन पर एक बार मुंह निकालकर देखता, भय होने लगा कि जिसको देख नहीं पाया वह कहीं रात में ही न उतर जाए।

दूसरे दिन सुबह एक बड़े स्टेशन पर गाड़ी बदलनी थी हमारे टिकिट फर्स्ट क्लास के थे- आशा थी, भीड़ नहीं होगी। उतरकर देखा, प्लेटफार्म पर साहबों के अर्दलियों का दल सामान लिए गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहा है। फौज के कोई एक बड़े जनरल साहब भ्रमण के लिए निकले थे। दो-तीन मिनिट के बाद ही गाड़ी आ गई। समझा, फर्स्ट क्लास की आशा छोड़नी पड़ेगी। मां को लेकर किस डब्बे में चढ लूं, इस बारे में बड़ी चिंता में पड़ गया। पूरी गाड़ी में भीड़ थी। दरवाजे-दरवाजे झांकता हुआ घूमने लगा। इसी बीच सैकंड क्लास के डिब्बे से एक लड़की ने मेरी मां को लक्ष्य करके कहा, आप हमारे डिब्बे में आइए न, यहां जगह है।

मैं तो चौंक पड़ा। वही अद्भुत मधुर स्वर और वही गीत की टेक जगह है क्षण-भर की भी देर न करके मां को लेकर डिब्बे में चढ़ गया। सामान चढ़ाने का समय प्रायः नहीं था। मेरे-जैसा असमर्थ दुनिया में कोई न होगा। उस लड़की ने ही कुलियों के हाथ से झटपट चलती गाड़ी में हमारे बिस्तरादि खींच लिए। फोटो खींचने का मेरा एक कैमरा स्टेशन पर ही छूट गया- ध्यान ही न रहा।

उसके बाद- क्या लिखूं, नहीं जानता। मेरे मन में एक अखंड आनंद की तस्वीर है- उसे कहां से शुरू करूं, कहां समाप्त करूं? बैठे-बैठे एक वाक्य के बाद दूसरे वाक्य की योजना करने की इच्छा नहीं होती।

इस बार उसी स्वर को आंखों से देखा। इस समय भी वह स्वर ही जान पड़ा। मां के मुंह की ओर ताका; देखा कि उनकी आंखों के पलक नहीं गिर रहे थे। लड़की की अवस्था सोलह या सत्रह की होगी, किंतु नवयौवन ने उसके देह, मन पर कहीं भी जैसे जरा भी भार न डाला हो। उसकी गति सहज, दीप्ति निर्मल, सौंदर्य की शुचिता अपूर्व थी, उसमें कहीं कोई जड़ता न थी।

मैं देख रहा हूं, विस्तार से कुछ भी कहना मेरे लिए असंभव है। यही नहीं, वह किस रंग की साड़ी किस प्रकार पहने हुए थी, यह भी ठीक से नहीं कह सकता। यह बिल्कुल सत्य है कि उसकी वेश-भूषा में ऐसा कुछ न था जो उसे छोड़कर विशेष रूप से आंखों को आकर्षित करे। वह अपने चारों ओर की चीजों से बढ़कर थी- रजनीगंधा की शुभ्र मंजरी के समान सरल वृंत के ऊपर स्थित, जिस वृक्ष पर खिली थी उसका एकदम अतिक्रमण कर गई थी। साथ में दो-तीन छोटी-छोटी लड़कियां थीं, उनके साथ उसकी हंसी और बातचीत का अंत न था। मैं हाथ में एक पुस्तक लिए उस ओर कान लगाए था। जो कुछ कान में पड़ रहा था वह सब तो बच्चों के साथ बचपने की बातें थीं। उसका विशेषत्व यह था कि उसमें अवस्था का अंतर बिल्कुल भी नहीं था- छोटों के साथ वह अनायास और आनंदपूर्वक छोटी हो गई थी। साथ में बच्चों की कहानियों की सचित्र पुस्तकें थीं- उसी की कोई कहानी सुनाने के लिए लड़कियों ने उसे घेर लिया था, यह कहानी अवश्य ही उन्होंने बीस-पच्चीस बार सुनी होगी। लड़कियों का इतना आग्रह क्यों था यह मैं समझ गया। उस सुधा-कंठ की सोने की छड़ी से सारी कहानी सोना हो जाती थी। लड़की का संपूर्ण तन-मन पूरी तरह प्राणों से भरा था, उसकी सारी चाल-ढाल-स्पर्श में प्राण उमड़ रहा था। अतः लड़कियां जब उसके मुंह से कहानी सुनतीं तब कहानी नहीं, उसी को सुनतीं; उनके हृदय पर प्राणों का झरना झर पड़ता। उसके उस उद्भासित प्राण ने मेरी उस दिन की सारी सूर्य-किरणों को सजीव कर दिया; मुझे लगा, मुझे जिस प्रकृति ने अपने आकाश से वेष्टित कर रखा है वह उस तरुणी के ही अक्लांत, अम्लान प्राणों का विश्व-व्यापी विस्तार है। दूसरे स्टेशन पर पहुंचते ही उसने खोमचे वाले को बुलाकर काफी-सी दाल-मोठ खरीदी, और लड़कियों के साथ मिलकर बिल्कुल बच्चों के समान कलहास्य करते हुए निस्संकोच भाव से खाने लगी। मेरी प्रकृति तो जाल से घिरी हुई थी- क्यों मैं अत्यंत सहज भाव से, उस हंसमुख लड़की से एक मुट्ठी दाल-मोठ न मांग सका? हाथ बढ़ाकर अपना लोभ क्यों नहीं स्वीकार किया।

-जारी

• शायरी...

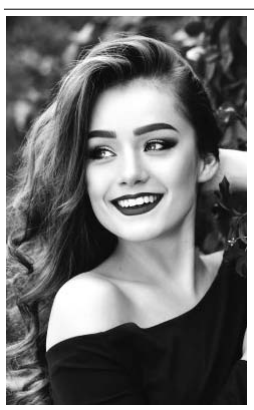

तुम नहीं पास कोई पास नहीं
अब मुझे ज़िंदगी की आस नहीं
सांस लेने में दर्द होता है
अब हवा ज़िंदगी की रास नहीं

◆ ◆ ◆

लाला ओ गुल बुझा सकें जिस को
इश्क़ की प्यास ऐसी प्यास नहीं
राह में अपनी ख़ाक होने दे
और कुछ मेरी इल्तिमास नहीं
क्या बताऊं मआल-ए-शौक़ 'ज़िगर'
आह क़ाएम मेरे हवास नहीं

-जिगर बरेलवी

◆ ◆ ◆

मिरे बारे में कोई राय तो होगी उसकी
उसने मुझको भी कभी तोड़ के देखा होगा
एक महफ़िल में कई महफ़िलें होती हैं शरीक
जिस को भी पास से देखोगे अकेला होगा

-निदाफ़ाजली

• इज़हार-ए-मोहब्बत...

इज़हार-ए-मोहब्बत के लिए लाज़मी नहीं
कि फूल ख़रीदे जाएं
किसी होटल में कमरा लिया जाए
या परिंदे आज़ाद किए जाएं
इज़हार-ए-मोहब्बत के लिए तुम अपने बोसे
काग़ज़ में लपेट कर भेज सकती हो
जिस तरह मैं ने अपने जज़्बे
तुम्हें पोस्ट कर दिए हैं

—ज़ाहिद इमरोज़